DEV SANSKRITI: Interdisciplinary International Journal **(2015), 6, 25-30**

बृहत्संहिता में भूगर्भ जलविद्या

टंकेश्वरी पटेल

सारांश

जल ही जीवन है। वैज्ञानिकों का कहना है कि जीवन का प्रारम्भ ही जल से हुआ है। जल की आवश्यकता मनुष्य को नित्य प्रति पड़ती है। इसके बिना जीवन नहीं चल सकता। इसलिये मानव सभ्यता का विकास ही नदियों के तट पर हुआ। कालान्तर में जनसंख्या बढ़ती गयी और जल संग्रहण के नये उपादान बनते गये और मनुष्य नदियों तट से हटकर दूर स्थानों में बसने लगे। जिसके फलस्वरूप कुओं की संस्कृति का विकास हुआ। वर्तमान समय में कुओं और नदियों का पानी पीने योग्य ही नहीं रह गया है। आज मानव पीने के पानी के लिये भूगर्भ जल पर ही निर्भर है, अतः इस युग में स्वादिष्ट व प्रचुर भूगर्भ जल कहाँ प्राप्त होगा, इसका ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है। आचार्य वराहमिहिर द्वारा रचित ग्रन्थ बृहत्संहिता में भूगर्भ जल विद्या का वैज्ञानिक और विस्तृत वर्णन दिया गया है। बृहत्संहिता में वर्णित लक्षणों द्वारा, मानव समाज भूगर्भ जल प्राप्त कर लाभान्वित हो सकता हैं। प्रस्तुत शोधपत्र में बृहत्संहिता के अनुसार भूगर्भ जल की परिभाषा, जल चिन्हों का वैज्ञानिक प्रतिपादन, वृक्ष तथा बाँबी के लक्षण से जल विचार, तृण शाकादि के द्वारा जल विचार, भू–लक्षण के अनुसार जल विचार, अन्य चिन्हों से जल विचार एवं जल शोधन की विधि के बारे में उल्लेख किया गया है। आधुनिक युग में भूमिगत जल के लिये मनुष्य ट्यूबेल खुदवाते हैं किन्तु कई जगह में उन्हें सफलता प्राप्त नहीं होती, जिसके कारण पैसे, श्रम व समय की बर्बादी के साथ निराशा के सिवा कुछ हाथ नहीं लगता। यदि बृहत्संहिता में दिये गये भू गर्भ लक्षण के अनुसार कुआँ अथवा ट्यूबेल खुदवायें तो सफलता प्राप्त होने की अधिक सम्भावना बनती है।

कूट शब्द : भू गर्भ जल, वाल्मीक, जलधारक एवं दकार्गल।

भावप्रकाश के अनुसार 'आपः, अम्भ, वारि, नीर, तोय, सलिल, जल, अमृत, जीवन, पय, पानी, उदक' इत्यादि जल के ही पर्यायवाची शब्द हैं (भावप्रकाशः, वारिवर्गः, श्लोक सं0–1; भावमिश्र, 1969, पृ.747)। बृहत्संहिता में जल विज्ञान को दकार्गल कहा गया है। दकार्गल दक + आर्गल शब्दों का समास है। जिसका अर्थ है पानी को रोकने वाली सिटकनी जो कि लक्ष्यार्थ है। वराहमिहिर के अनुसार जिस विद्या से भूमिगत जल का ज्ञान होता है, उस धर्म तथा यश देने वाले ज्ञान को दकार्गल कहते हैं (बृहत्संहिता, दकार्गलाध्याय, श्लोक सं0–1)।

तिरूपति वेंकटेश्वर युनिवर्सिटी के भूस्तरशास्त्रविद् प्रोफेसर इ.ए.वी. प्रसाद ने अपने ग्रन्थ *''ग्रॉउड वॉटर इन बृहत्तसंहिता''* में लिखते है कि –पाश्चात्य वैज्ञानिक वराहमिहिर के ग्रन्थ से अनभिज्ञ होने के कारण ही भूगर्भजल विषय पर शोध का प्रारम्भ हाल ही हुआ है, ऐसा मानते हैं। इसलिये माइन्झर (1942) ने अपने ग्रन्थ *''द हिस्टिरि ऑफ डेवलपमेंट ग्रॉउड वॉटर हाईडरोलोजी''* में फ्रेंच पदार्थ वैज्ञानिक ऐडम मेरियर (1920–1984) को जल विज्ञान के आद्य संस्थापक के रूप में सम्मानित किया है (Meinzer, 1942)। विझला और ब्रिटर भी जल विज्ञान को अद्यतन और अभी– अभी विकसित विज्ञान मानते हैं तथा हजारों वर्ष पूर्व इस विषय का ज्ञान मनुष्य को होने का कोई प्रमाण अब तक प्राप्त नहीं हुआ ऐसा कहते हैं (Prasad, 1980)।

किन्तु वराहमिहिर कृत बृहत्संहिता का कोई भी अध्येता वराहमिहिर को ही जल विज्ञान के आद्य संस्थापक के रूप में गौरवान्वित करेगा क्योंकि उनकी कृति वर्तमान में भी व्यापकता तथा अन्वेषण की सटीकता की दृष्टि से अपूर्व और अद्वितीय है। प्रस्तुत शोधपत्र बृहत्संहिता में भूगर्भजल–विद्या विषयक दकार्गलाध्याय का सम्पूर्ण वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत करने का प्रयास है।

भूगर्भ जल की परिभाषा

भू गर्भ जल का तात्पर्य है– भूस्तर के नीचे प्रवाहित सभी प्रकार के जल स्रोत। परन्तु प्रायः भूस्तर से एक हजार फुट की गहराई में प्राप्त जल स्रोत का ही अध्ययन अधिकांश रूप में हुआ है तथा उसी जल को खींचकर उपयोग में लिया जाता है। आचार्य वराहमिहिर कहते हैं कि जिस प्रकार मनुष्यों के शरीर में शिराएँ अर्थात् नसें होती हैं, उसी तरह पृथ्वी में भी शिराएँ होती हैं, जिनमें जल बहता है। उन शिराओं के ऊपर नीचे स्थित होने का ज्ञान होने से भीतर का ज्ञान हो जाता है (बृहत्संहिता, दकार्गलाध्याय, श्लो0सं0 1)।

बॉल्टन (1970) के अनुसार इस भू गर्भ जल में तीन प्रकार के जल हैं– (1). चट्टानों के बीच संग्रहित जल (2). सामान्यतः भूस्तर के नजदीक भूमिगत दरारों में स्थित जल (3). ज्वालामुखी के कारण द्रव्य चट्टानों की छोटी–छोटी नालियों में निर्मित प्राप्त गुहा जल (Walton, 1970, p.1)। आचार्य वराहमिहिर ने भी तीन प्रकार के भू गर्भ जलधारकों के बारे में निर्देश दिया है (1). अकृत्रिम या अनिरुद्ध जलधारक (2). कृत्रिम या निरुद्ध जलधारक तथा (3). ऊँट की लम्बी गर्दन के आकार के जलधारक (बृहत्संहिता, दकार्गलाध्याय, श्लो0सं0– 62)। आचार्य वराहमिहिर ने ऐसे जलधारकों का भी वर्णन किया है जो दो शिराओं में प्रवाहित होती है। ऐसे जलधारक दुःस्थित जलधारकों के नाम से पहचाने जाते हैं (बृहत्संहिता, दकार्गलाध्याय, श्लो0सं0– 33–34, 41–46, 72–75)।

जलचिन्ह

वराहमिहिर ने भूगर्भ जल सूचक संकेत प्राप्त करने के लिये भूमि को आनूप, जांगल तथा मरुदेश ऐसे तीन भागों में विभाजित किया है। *आनूप* का अर्थ है– भरपूर जल युक्त प्रदेश, *जांगल– अर्थात* निर्जल अथवा कम जल वाला क्षेत्र तथा *मरुभूमि–* अर्थात रणप्रदेश है। बृहत्संहिता में भूमि के नीचे जल प्राप्ति के चिन्हों में वाल्मीक (बाँबी) का कई जगह उल्लेख मिलता है तथा वाल्मीक दीमक से बनती है। दीमक नमी पसन्द करती हैं, इसलिये बरसात में यह अक्सर लकड़ी की चीजों को खा जाती है। वराहमिहिर ने दीमक के बिलों का भूगर्भ जल–संकेत के रूप में निर्देश किया है। उनके निर्देशों के तथ्यों के अनेकानेक आधुनिक वैज्ञानिकों के शोध कार्यो से भी समर्थन प्राप्त होता है (Frisch, 1974; Yakushev,1968; Ghilarov, 1962; Wisler & Brater, 1959, p.190)। स्नाइडर (1935) ने अपनी पुस्तक *''ऑवर एनिमि द टरमाईट''* में भी लिखा है कि भूतल से भूगर्भ जल की गहराई तक पहुँचने के पश्चात् ही दीमक जमीन में फैलना बन्द करता है (Synder, 1935, p.59)। तैत्तिरीय आरण्यक में भी उपदिका शब्द द्वारा दीमक की जलशोधक प्रवृत्ति का भी निर्देश किया गया है (तैत्तिरीय, आरण्यक, 5/1/4)।

बृहत्संहिता के दकार्गलाध्याय में जलचिन्ह के संकेत के रूप में 86 प्रकार के वृक्षों का वर्णन किया गया है। जिसमें अलग–अलग किस्म के वृक्षों को भूगर्भ जल मापन का संकेत मानकर भूगर्भ से अलग–अलग पानी मिलने की गहराई बतायी गयी है। इसके साथ ही अलग–अलग प्रान्तों व प्रदेशों को आनूप, जांगल एवं मरु– इन तीनों भागों में विभाजित कर, वराहमिहिर ने जल प्राप्ति की गहराई में अन्तर को भी स्पष्ट किया है। दीमक के बिल पर अंकुरित वनस्पति को भी जल संकेत माना है। इस विषय पर आधुनिक वैज्ञानिकों ने भी शोध कार्य किया है (Herris, 1961, p.80)। वाटसन (1969) ने दीमक के बिल के नीचे केवल एक मीटर की गहराई में जल होने की बात कही है (Watson, 1969) । स्टॉकडिल (1966) के अनुसार तो बिल अथवा ढेर के उपर घास उगने की प्रक्रिया को बल प्रदान करने वाले कारण भी बताये है (Stockdil, 1966)।

बृहत्संहिता के विधानों में अत्यन्त आकर्षित करने वाली बात यह है कि वृक्ष की कौन सी दिशा में दीमक का बिल तथा कौन सी दिशा में जल होगा, इसकी विस्तृत सूचनायें हैं। बृहत्संहिता के अनुसार अधिकांश बिल उत्तर दक्षिण, पूर्व अथवा पश्चिम, किसी एक दिशा में स्थिर होते हैं। ईशान, आग्नेय, वायव्य, नैऋत्य आदि बीच की कोणीय विदिशाओं में छिद्र नलिकायें अथवा मूल नहीं जाते यह विशेष रूप से ध्यान में रखने योग्य बातें हैं। बृहत्संहिता में वराहमिहिर ने वृक्ष और वाल्मीक के उपरान्त मेंढक, साँप आदि जीव जन्तु को भी भूगर्भ जल संकेत के रूप में माना है। भूगर्भ जल, विषय में जमीन की सतह से सम्बद्ध संकेत के रूप में वराहमिहिर ने आठ प्राणियों का निर्देश किया है। मेंढक, मछली, साँप, गिलहरी, नेवला, कछुआ, बिच्छू तथा चूहा (बृहत्संहिता, दकार्गलाध्याय, श्लो0सं0– 31–33)।

वैज्ञानिक दृष्टि से यह उल्लेख निश्चित रूप से प्राणियों की ग्रीष्म निष्क्रियता के बारे में है। निर्दिष्ट प्राणी असमतापी अथवा शीत रक्त के हैं। उनके शरीर का तापमान उनके आसपास के पर्यावरण के बराबर होता है। वातावरण की शुष्कता के कारण निर्मित इस निष्क्रिय अवस्था को ग्रीष्म निष्क्रियता कहा जाता है। यदि निष्क्रियता शीत वातावरण के कारण हो तो उसे शीत निष्क्रियता कहते हैं। ऋग्वेद के मण्डूक सूक्त में *'संवत्सरं शशयानः'* अर्थात् वर्षभर गुप्त रहने वाला शब्द का प्रयोग मेंढक की ग्रीष्म निष्क्रियता का स्पष्ट निर्देश करता है (ऋग्वेद, 7/103/1; आचार्य, 2012, पृ. 115)।

वराहमिहिर ने ऐसे जलधारकों का उल्लेख किया है जिनमें तीन वर्ष में पानी कम हो जाता है *''शिरा नश्यति वर्ष त्रायेऽतीते''* (बृहत्संहिता, दकार्गलाध्याय, श्लो0सं0– 26)। इसके साथ बृहत्संहिता में वराहमिहिर ने उत्तर दिशा की ओर, ईशान कोण की ओर तथा पश्चिम दिशा की ओर मुड़ने वाली जल शिराओं का उल्लेख भी किया है (बृहत्संहिता, दकार्गलाध्याय, श्लो0सं0– 20,21,29,30,33,37,38,39,40,63, 64,70,71,74)। इस प्रकार बृहत्संहिता पर विस्तृत रूप से भूगर्भ जल चिन्हों का उल्लेख प्राप्त होता है।

यहाँ कुछ महत्वपूर्ण एवं उपयोगी जल की विवेचना प्रस्तुत की जा रही है–

वृक्ष तथा बाँबी के लक्षण से जल विचार

बृहत्संहिता में आचार्य वराहमिहिर ने जिन–जिन वृक्षों से जल विचार कहा है, वे सभी वृक्ष स्वाभाविक रूप से उत्पन्न होते हैं। आचार्य वराहमिहिर ने जल की गहराई के लिये पुरुष शब्द का प्रयोग किया है। ऊपर की ओर हाथ उठाकर पुरुष की लम्बाई को पुरुष का मान, माना जायेगा। अतः औसतन 120 अंगुल– 1 पुरुष पैमाना हुआ तथा 90'' इंच, 7.6 फिट, 225 से. मी. या 2.25 मी. का एक पुरुष हुआ।

आचार्य वराहमिहिर ने वृक्ष तथा बाँबी के अनुसार भूगर्भ जल का जो संकेत दिया है उनमें से कुछ मुख्य जलधारक निम्न हैं–

वृक्ष	बाँबी की दिशा	जल की दिशा	गहराई	जन्तु, मिट्टी व पत्थर की प्राप्ति	भूगर्भ जल के गुण धर्म	भूगर्भजल की मात्रा	श्लोक संख्या
करीर (Capparis decidua)	उत्तरकी ओर	साढ़ेचार हाथ दक्षिण में	दस पुरुष (900'')	90'' बाद पीला मेंढक फिर जल	मीठा	–	बृ.सं./54/68
बेर (Ziphus mauritiana) व करील	–	पश्चिम में तीन हाथ दूर	अठारह पुरुष (1620'')	जल	–	प्रचुर मात्रा में	बृ.सं./54/74
पीलु (Salvadora oleiodes), व बेर	–	तीन हाथ पूर्व में	बीस पुरुष (1800'')	जल	–	प्रचुर मात्रा में	बृ.सं/54/75
जामुन (Syzygium cumini)	पूर्व की ओर	दक्षिण में तीन हाथ वृक्ष से दूर	दो पुरुष (180'')	45'' बाद मछली, काला पत्थर, काली मिट्टी, जलशिरा (असितपाषणम्)	मीठा	प्रचुर मात्रा में	बृ.सं./54/9–10
गूलर (Ficus racemosa)	–	तीन हाथ पश्चिम में	ढाई पुरुष (225'')	45'' बाद सफेद सांप, काला पत्थर, जलशिरा	मीठा	–	बृ.सं./54/11
निर्गुंडी (Vitex negando)	पास में ही	दक्षिण की ओर तीन हाथ दूर	सवादो पुरुष (222.5'')	–	मीठा	प्रचुर मात्रा में	बृ.सं./54/14–15
करंज (Pongamia pinnata)	दक्षिण दिशा	दो हाथ दक्षिण में	साढ़ेतीन पुरुष (315'')	41'' बाद कछुवा, तत्पश्चात् जल	–	कम (स्वल्पम्)	बृ.सं./54/33–34
महुआ (Madhuca longifalia)	उत्तर में	पश्चिम की ओर पाँच हाथ बाद	साढ़ेसात पुरुष (675'')	90'' बाद साँप, धुँएरंगत वाली मिट्टी, मेहरुन रंगत का पत्थर पश्चात् जल	मीठा	प्रचुरमात्रा में	बृ.सं./54/35–36
तिलक	दक्षिण में कुशाघास उगी हो	पाँच हाथ पश्चिम में	पाँच पुरुष (450'')	जल	मीठा	प्रचुरमात्रा में	बृ.सं./54/35–36
कदम्ब (Neolumorrckia cadamba)	पश्चिम में	तीन हाथ दक्षिण में	छे पुरुष (540'')	90'' बाद सुनहरा मेंढक, पीली मिट्टी, जल	लोह स्वाद	प्रचुर मात्रा में	बृ.सं./54/38–39
पीला धतूरा (Datura stramonium)	बांयी या उत्तर दिशा में बाँबी	दो हाथ बाद दक्षिण में	पन्द्रह पुरुष (1350'')	45'' बाद ताम्ररंग का नेवला, ताम्ररंग का पत्थर, लाल मिट्टी	खारा	–	बृ.सं./54/70–72
पीलु (Salvadora oleiodes)	ईशान कोण में, सॉप या चीटीं की बॉबी में	साढ़ेचार हाथ पश्चिम में	पॉच पुरूष (450'')	90'' इंच बाद मेंढ़क, पीली मिट्टी, हरी चमकीली मिट्टी, पत्थर अन्त में जल।	खारा	प्रचुर मात्रा में	बृ.सं./54/63–64
ताड़ (Borassus flabellifer), नारियल (Cocos Hucifera), खजूर (Phoenix sylvestris).	पास बॉबी में	छह हाथ पश्चिम में	चार पुरूष (360'')	जल	–	–	बृ.सं./54/40

भू लक्षण से जल विचार

भूमि के लक्षण के अनुसार भी वराहमिहिर ने जल का विचार भी बताया है, क्योंकि सर्वत्र तो स्वाभाविक रूप से उगे हुए पेड़ नहीं मिल सकते इसलिये मानव समाज सभी प्रकार से लाभान्वित हो इस दृष्टि से भूमि लक्षण के अनुसार भी आचार्य वराहमिहिर ने जल विचार कहा है–

जहाँ पर भूमि एक रंग की हो तथा किसी एक जगह पर अलग– सी दिखे तथा उस जगह पर कुछ न उगे तो वहाँ पाँच पुरुष (450'') नीचे जल होता है।	(बृ0सं0 54/90)
सर्वत्र गर्म भूमि के बीच में जहाँ पैर रखने से ठण्डक लगे तथा ठण्डक वाली भूमि के बीच में गर्म हो तो वहाँ साढ़े तीन पुरुष (315'') नीचे जल होता है।	(बृ0सं0 54/94)
जहाँ पर बोया बीज न उगे और उगी फसल सूख जाए वहाँ चार हाथ नीचे पानी होता है।	(बृ0सं0 54/95)
जहाँ पर भूमि चिकनी दबी हुई रेतीली ठोकने पर आवाज करती हो तो साढे चार पुरुष (405'') नीचे जल होता है।	(बृ0सं0 54/95)
जंगल व आनूप प्रदे"ाों में जहाँ धरती पैर रखने से धँसती हो, वहाँ पर पौने चार फीट नीचे ही जल होता है। जहाँ पर चींटी आदि बिना बिल के ही दिखती हों, वहाँ भी जल होता है।	(बृ0सं0 54/93)

आचार्य वराहमिहिर ने मिट्टी के रंग के अनुसार उनके गुण व धर्म भी कहा है–

मिट्टी का रंग	जल का स्वाद	श्लो0सं0
नीली मिट्टी (कंकड़ युक्त)	मीठा	बृ.सं./54/103
काली व लाल मिट्टी	मीठा	बृ.सं./54/103
ताम्रपर्णी, चिकनी (स्निग्ध) कंकड़ युक्त	कषाय	बृ.सं./54/104
भूरी पीली मिट्टी	खारा	बृ.सं./54/104
पीले रंग की मिट्टी	नमकीन	बृ.सं./54/104

आचार्य वराहमिहिर ने मिट्टी के रंग से पानी की मात्रा भी कहा है –

मिट्टी का रंग	जल की मात्रा	श्लोक सं0
सूर्य अग्नि के समान रंग वाली मिट्टी।	जल रहित	बृ.सं. 54/106
जहाँ पर शिला, लहसुनिया रंग वाली, मूँग रंग वाली, पके हुए गूलर के समान रंग वाली शिला हो।	प्रचुर मात्रा में	बृ.सं. 54/107
जहाँ पर शिला कबूतर के समान रंग वाली, शहद और घी के रंग वाली हो।	प्रचुर मात्रा में	बृ.सं. 54/108
जहाँ शिला लाल व काला मिश्र वर्ण हो।	जल रहित	बृ.सं. 54/109
जहाँ भूमि स्फटिक पत्थर चाँदनी, मोती, सुवर्ण, नीलम, काजल रंग वाली हो।	भरपूर	बृ.सं. 54/110

प्राचीन ऋषि– मुनियों ने भौतिक पदार्थों को मूलभूत तत्वों के परमाणुओं के संयोजन तथा गुणधर्मों के सन्दर्भ में वर्गीकृत करके आकाश, वायु, तेज, जल और पृथ्वी नामक पंचमहाभूतों में विभाजित किया है। चरक संहिता तथा सुश्रुत संहिता जैसे आयुर्वेद के प्रसिद्ध ग्रन्थों में इन महाभूतों के सन्दर्भ में ही पदार्थों के गुणधर्मों का निरूपण किया गया है। चरक संहिता के 26 वें सूत्रस्थान अध्याय (शास्त्री, 1994, पृ. 395–398) में स्वाद और संख्या की चर्चा करते हुए ऋषि आत्रेय पुनर्वसु ने कहा है कि स्वाद केवल छः हैं– मीठा, खट्टा, खारा, कषाय, तिक्त और कटु तदुपरान्त यह सभी स्वाद जल से उत्पन्न होते हैं। सुश्रुत के प्रथम सूत्रस्थान अध्याय (शर्मा एवं आचार्य, 1980, पृ.196) में कहा गया है कि प्रत्येक महाभूत अन्य महाभूतों के साथ सम्मिश्रित होता है। उदाहरणतः आकाश महाभूत में वायु, तेज तथा जल के अंश मिश्रित होते हैं। उसी प्रकार तेजस् महाभूत में भी पृथ्वी तथा जल के अंशों का सम्मिश्रण रहता है। शुद्ध 'अप्' अर्थात् जल महाभूत स्वादहीन होता है। किन्तु अन्य महाभूत उसमें प्रविष्ट होकर जल से रासायनिक या यान्त्रिक संयोजन प्राप्त करते हैं या तो सामान्य रीति से जुड़ते हैं। तब छः प्रकार की पृथ्वी विभिन्न क्षेत्रों के जल में पिघलकर भिन्न–भिन्न स्वाद का सृजन करती है। यदि पृथ्वी महाभूत की मात्रा अधिक हो तो खारा अथवा खट्टा स्वाद होता है। जल महाभूत का प्राधन्य हो तो मीठा स्वाद पैदा होता है। पृथ्वी महाभूत के अणु तेजस् के अणुओं के साथ मिश्रित होकर जल में पिघलते हैं तो कटु अथवा तीखा स्वाद बनता है। आयुर्वेद के इन ग्रन्थों में प्राप्त सामग्री वेदकाल से एकत्रित की गई है। अतः वराहमिहिर कृत बृहत्संहिता को भी वैज्ञानिकता की कसौटी पर प्रामाणिक कहा जा सकता है।

अन्य चिन्हों से जल विचार

जहाँ काँटे रहित पेड़ों के बीच में स्वयंमेव काँटेदार पेड़ या झाड़ उगे हों वहाँ से तीन हाथ पश्चिम की ओर 25 फीट नीचे (300''इंच) नीचे जल या धन होता है।	(बृ0सं0 / 54 / 53)
यदि किसी वृक्ष की एक शाखा नीचे की ओर झुकी हुई हो तथा उसके पत्ते कुछ पीले हो गये हों, उसी टहनी के तीन पुरुष नीचे (270'') खोदने पर जल प्राप्त होता है। अतः चुम्बक की भाँति यह भी आकर्षक प्रभाव का प्रत्यक्ष उदाहरण है।	(बृ0सं0 54 / 55)
जहाँ पर जमीन छूने से अकारण गर्म लगे या धुँआ सा निकले, तो वहाँ 180'' नीचे बहुत मात्रा में पानी होता है	(बृ0सं0 54 / 60)
एक जगह पाँच बाँबी हों और बीच वाली बाँबी सफेद हो, तो उसी बीच वाली बाँबी में 55 पुरुष नीचे जल की शिरा बहती है।	(बृ0सं0 54 / 82)
सूखे प्रदेश में जहाँ घास उगी हो अथवा जलीय प्रदेशों में जहाँ घास न हो तथा आसपास प्राकृतिक घास हो तो वहाँ पर जल या धन होता है।	(बृ0सं0 54 / 52)
जलहीन प्रदेश में जहाँ पैर पटकने से जमीन की आवाज गहरी व मधुर तथा नाद युक्त हो उसी स्थान पर 26 फीट (312'') नीचे जल होता है।	(बृ0सं0 54 / 54)
जिस खेत में फसल पैदा होकर नष्ट हो जाती हो या जहाँ पर खेती बहुत मात्रा में होती हो अथवा भूमि पर बहुत पानीपन सा हो वहाँ दो पुरुष नीचे (180'') बहुत जल होता है	(बृ0सं0 54 / 61)
आचार्य वराहमिहिर ने रेगिस्तान प्रदेश का भी जल विचार कहा है। वे कहते हैं कि जिस तरह ऊँट की गरदन बहुत टेढ़ी व नीची तथा सर्पाकार होती है। वैसे ही रेगिस्तान में बहुत नीचे जल शिराएँ होती ह।	(बृ0सं0 54 / 62)

जल शुद्धिविधान

बृहत्संहिता में जल शुद्धि विधान का भी वर्णन है, बृहत्संहिता के अनुसार कुएँ का पानी यदि गन्दला, कडुआ, खारा, बेस्वाद या दुर्गन्ध वाला हो तो– अंजन, मोथा, खस, राजकोशातक, आँवला, कतक (नर्मली) –इन सबका चूर्ण कुएँ में डालें, इन औषधियों के प्रभाव से जल निर्मल, मधुर, सुन्दर, सुगन्ध वाला और उत्तम होकर खारापन भी दूर हो जाता है (बृहत्संहिता, 54 / 121)। बृहत्संहिता में वनस्पतियों के द्वारा रसायन तैयार करके चट्टानों के तोड़ने के उपाय भी बताये हैं।

बृहत्संहिता की भूगर्भ जलविद्या का वर्तमान महत्व

ई0स0 1977 में अर्जेण्टीना में हुयी युनाइटेड नेशन्स की इण्टरनेशनल कॉन्फ्रेंस में भूगर्भ जल के बारे में विचारणा हुयी थी। इसमें बताया गया था कि विश्व में जल की 95 प्रतिशत राशि समुद्रों एवं महासागरों में है। 4 प्रतिशत हिम बर्फ एवं स्थायी भूमि के स्वरूप में है। केवल 1 प्रतिशत जल राशि ही भूगर्भ जल के रूप में प्राप्त होता है (Prasad, 1980, p.1)। आज विकसित देशों में ग्रामीण विस्तारों में बसने वाले करोड़ों लोगों को पर्याप्त पानी की सुविधा उपलब्ध नहीं होती। ऐसी विकट स्थिति में भूगर्भ जल ही पीने के पानी का साधन हो सकता है। किन्तु जब कुआँ अथवा ट्यूबेल खुदवाते हैं, तो कभी सफलता मिलती है और कभी असफलता। जब असफलता होती है तो पैसा, समय और श्रम तीनों की बर्बादी होती है। ऐसी स्थिति में मनुष्य समाज को वराहमिहिर के जल विज्ञान से पूर्ण लाभ प्राप्त हो सकता क्योंकि वराहमिहिर की जल विद्या पूर्णतः वैज्ञानिक और सटीक है।

तिरूपति वेंकटेश्वर युनिवर्सिटि के भूस्तर शास्त्रविद् प्रोफेसर इ. ए. वी. प्रसाद ने वराहमिहिर लिखित बृहत्संहिता में जलविद्या सम्बन्धित दकार्गलाध्याय नामक 54 अध्याय का तलस्पर्शी अध्ययन करके *''ग्राउण्ड वॉटर इन वराहमिहिरस बृहत्संहिता''* नामक ग्रन्थ 1980 में प्रकाशित किया। तब मद्रास युनिवर्सिटि के पूर्व कुलपति तथा अन्ताराष्ट्रिय मान्यता प्राप्त प्रखर वैज्ञानिक एम. सान्तप्पा ने इस ग्रन्थ का स्वागत करते हुये लिखा है की वराहमिहिर के प्रत्येक श्लोक में निहित सभी विधानों की शुद्ध वैज्ञानिक पद्धति से तलस्पर्शी कसौटि करने पर सभी विधान शतप्रतिशत अक्षुण्ण प्रमाणित हुये हैं (Prasad, 1980, p.5-7)। मुम्बई के जल निर्माण संशोधन केन्द्र के मालिक श्री सी0एम0 शाह ने अनुसार जहाँ उनके ट्यूबेल और कुँए निष्फल हुये थे ऐसे क्षेत्रों में उन्होंने बृहत्संहिता का अध्ययन कर उस पद्धति के अनुसार ट्यूबेल खुदवाया जिससे उन्हें पूर्ण सफलता प्राप्त हुई (जोशी, 2003)। ऐसे कई उदाहरण है, जिन्हें बृहत्संहिता के अनुसार जल विचार कर ट्यूबेल खुदवाने से पूर्ण सफलता प्राप्त हुयी। इस प्रकार वराहमिहिर के जल विज्ञान का वर्तमान में अत्यन्त महत्व सामने आता हैं।

निष्कर्ष

प्रस्तुत शोधपत्र में आचार्य बराहमिहिर के अनुसार वृक्ष तथा बाँबी के लक्षण से जल विचार, भूलक्षण से जल विचार, अन्य

चिन्हों से जल विचार प्रस्तुत किया गया है तथा उनके अनुसार मिट्टी के रंग से जल की मात्रा भी कहा गया है तथा जल शुद्धि विधान का भी संक्षिप्त वर्णन किया गया है। जिससे मनुष्य अवश्य लाभान्वित हो सकते हैं।

आधुनिक विज्ञान के निरिक्षणात्मक तथा विश्लेषणात्मक संशोधनों के फलस्वरूप प्राप्त जानकारी के संदर्भ में बृहत्संहिता का दकार्गलाध्याय सम्पूर्ण विश्वसनीय है, इस प्रकार के शोध हेतु शोधार्थी को वनस्पति, जीव जन्तु–प्राणी, जमीन तथा चट्टानों के उपर होने वाले सापेक्ष आर्द्रता के प्रभावों का अध्ययन आवश्यक है। इस प्रकार का कार्य केवल संशोधक, विविध विज्ञान शाखाओं से परिचित और संयोजनात्मक दृष्टिकोण वाले वैज्ञानिक के लिए ही संभव है। अतः वराहमिहिर का ग्रन्थ बृहत्संहिता उनके वैज्ञानिक होने का सबसे बड़ा प्रमाण है उनकी सबसे बड़ी सिद्धि भूतल के परीक्षण तथा उसके आधार पर शुष्क तथा अर्धशुष्क क्षेत्रों में जैव विज्ञान तथा भौतिक वातावरण के संदर्भ में वास्तविक आर्द्रता के प्रतिभावो द्वारा भूगर्भ जल के अस्तित्व की खोज है। उनकी यही श्रेष्ठतम उपलब्धि देश काल से परे वैज्ञानिकों द्वारा सराहना का पात्र है।

वराहमिहिर रचित बृहत्संहिता के भूगर्भ जल विद्या की सार्थकता के अनेक सटीक प्रमाण हैं। वर्तमान समय में समग्र विश्व जल की विकट समस्या से पीड़ित है। इस समस्या के हल में वाहमिहिर कृत बृहत्संहिता का भी सफल योगदान हो सकता है। इस दिशा में प्रवृत्त होने की वृत्ति– प्रवृत्ति होने से ही बृहत्संहिता के भूगर्भ जल विद्या की सार्थकता है।

टंकेश्वरी पटेल, पी–एच0डी0, सहायक प्राध्यापक, भाषा विभाग–संस्कृत केन्द्र, देव संस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार, उत्तराखण्ड, भारत।

सन्दर्भ सूची

आचार्य, श्रीराम शर्मा (2012). *ऋग्वेद संहिता (भाग–3)।* मथुरा– अखण्ड ज्योति संस्थन।

झा, अच्युतानन्द (2005). *बृहत्संहिता (भाग–2)।* वाराणसी– चौखम्भा विद्या भवन।

जोशी, प्रज्ञा योगेश (2003). संस्कृत वाड्.मय में जलविद्या। *पावमानी शोध पत्रिका, 11,* 45–46.

भावमिश्र (1969). *भावप्रकाशः (पांचवां संस्करण)।* वाराणसी– चौखम्बा संस्कृत संस्थान।

शस्त्री, काशीनाथ (1994). *चरकसंहिता (चतुर्थ संस्करण)।* वाराणसी– चौखम्भा संस्कृत संस्थान।

शर्मा, श्रीयादव एवं आचार्य, नारायणराम (1980). *सुश्रुत संहिता (चतुर्थ संस्करण)।* वाराणसी– चौखम्भा औरियन्टालिया।

Frisch, K. (1974). *Animal Architecrure.* New York: Harcourt Jovanovich.

Ghilarov, M. S. (1962). Termites of the USSR, their distribution and importance. *In Termites in the Humid Tropics*, New Delhi Symposium, pp. 131-135. UNESCO, Paris.

Harris, W. V. (1961). *Termies: Their Recognition and Control*. London: Longmans Geen and Co.

Meinzer, O. E. (1942). *Hydrology.* New York: Dover Publication.

Prasad, E. A. V. (1980). *Ground Water in Varahmihirs Brihat samhita*. Tripurati, AP: Sri Venkateswara University.

Snyder, T. E. (1935). *Our Enemy the Termite.* New York: Comstock Publication company.

Stockdil, S. M. J. & Ecol, N. Z. (1966). The Effect of Earth Worms on Pasture. *The New Zealand of Ecology, 13*, 68-75

Walton, W. C. (1970). *Ground Water Resource Evaluation.* Location: Mc. Graw Hill Kogakusha Ltd.

Watson, J. P & Ecol, J. (1969). Water Movement in Two Termite Mounds in Rhodesia. *Journal of Ecology, 57,* 441-451

Wisler, C. O. & Brater, E. F. (1959). *Hydrology.* Hoboken, NJ: John Wiley.

Yakushev, V. M. (1968). Influence of termite activity on the development of laterite soil. *Soviet Soil Science, 1,* 109-111.